इसामिया मिशन का प्रकाशन नं० १५१

शाँति-संदेश

इमामिया मिशन लखनऊ

सन् १६३२ ई० में यह धर्म प्रचारिणी सभा स्थापित हुई थी। अपने जन्म काल से यह सभी ऐसे साहित्य को प्रकाशित करती रही है। जो कि इस संसार की वर्तमान परिस्थिति में जब कि माया वादी सिद्धान्तों ने मानवता का विनाश किया है, मानव जाति को ऐसे सात्विक जीवन धर्म एवं कर्त्तव्य का मार्ग दिखलावे जिस पर चल कर अज्ञान रूपी अंधकार में भटकी हुई आत्मा को शान्ति तथा सुख प्राप्त हो सके। हम. आशा करते हैं कि आप (पाठक) हमें अपना सहयोग देकर इस उत्तम तथा पावन सिद्धान्त के प्रसार को सफल बनावें। आप स्वयं ध्यान पूर्वक इस साहित्य का अवलोकन करें तथा खरीद कर दूसरों में बिना मूल्य लिये हुये वितरित करें।

सेवकः—

सै० इब्न हुसैन नक़वी

आनरेरी सेक्रेटरी

इमामिया मिशन

लखनऊ (भारत)

शाँति-संदेशद

लेखक

सैय्यदुलउलेमा

मौलाना सैय्यद अली नक़ी नक़वी मुजतहिद

अध्यापक

(लखनऊ यूनिवर्सिटी)

भाषान्तरकार

सय्यद मुहिब्बुल हसन रिज़वी "समर" हल्लौरी

बी० ए० सी० टी०

अध्यापक

यादगार हुसैनी हायर सिकंडरी स्कूल

इलाहाबाद।

प्रकाशक

सय्यद इब्ने हुसेन नक़वी

आनरेरी सेक्रेट्री

इमामिया मिशन (रजिस्टर्ड)

लखनऊ।

दो शब्द

वर्तमान काल के दो महायुद्धों ने मानव समाज को जिस प्रकार भ्रष्ट किया है उस का वर्णन नहीं हो सकता। समस्त संसार ने यह देख लिया कि युद्ध द्वाराशांति स्थापित नहीं हो सकती। इसी शांति की खोज में समस्त विश्व आज व्याकुल हो रहा है अहिंसा की शिक्षा पाने वाली जातियों ने भी अपना आचार बिगाड़ रक्खा है।

अतएव पूरे संसार को शाँति का मार्ग दिखाने के लिए हम इस पत्रिका द्वारा एक ऐसे अभ्रान्त शांति-संदेशद की जीविनी आप के समक्ष प्रस्तुत करने में गर्व का अनुभव कर रहे हैं जो निस्संदेह शांति की समस्या को हल करने वाला था।

हमारा विचार है कि शांति की खोज करने वाले बड़ी बड़ी सभाओं तथा सम्मेलनों में यदि इस जीविनी को पढ़ें तो उन को शांति का अर्थ भी मालूम हो जाए और वह विश्व-शांति स्थापित करने में सहायक सिद्ध हो सकें।

सेवक :—

सय्यद इब्ने हुसेन नक़वी

सिक्रेट्री इमामिया मिशन (रजिस्टर्ड)

लखनऊ

शाँति-संदेशद

इस्लाम ने सांस्कृतिक प्रथा के रूप से जो स्थान विश्व-इतिहास में प्राप्त किया है उस को देखते हुए इस्लाम के संदेश वाहक के जीवन चरित्र में केवल इस्लाम के मानने वालों के लिए, एक पवित्र एवं विशेष आकर्षण ही नहीं है बल्कि विश्व-इतिहास में मानव संस्कृति तथा सभ्यता की उन्नति की एक सार्वजनिक मंजिल होने के कारण उसे सार्वभौमिक महत्व प्राप्त है।

यह हमारा दुर्भाग्य है कि आज कल स्कूलों तथा कालेजों के मुसलमान बच्चे भी अन्य दार्शनिकों की जीवनियों की अपेक्षा अपने रसूल की जीवनी से कम जानकारी रखते हैं।

पवित्र धर्म पथप्रदर्शकों के संक्षिप्त वर्णन की यह ग्रन्थमाला इस लिये आरम्भ की जा रही है कि जिन्हें बड़ी बड़ी पुस्तकों के पढ़ने का अवकाश नहीं है वे इन संक्षिप्त वर्णनों को पढ़ कर अपने मस्तिष्क में सुरक्षित रख सकें।

इस ग्रन्थ माला की पहली कड़ी हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा (अल्लाह उन पर और उन के वंश पर अपने विशेष कृपा करें) जो अल्लाह के अन्तिम दूत हैं, के जीवन का पवित्र वर्णन है जो इस पत्रिका के रूप में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है।

नाम एवं वंश माला

अल्लाह के मित्र हज़रत इब्राहीम के एक पुत्र हज़रत

इसहाक़ के वंश से इसराईल गोत्र वाले थे। इन्हीं में हज़रत मूसा हज़रत ईसा और अन्य पैग़म्बर हुए। और हज़रत इब्राहीम के दूसरे पुत्र हजरत इस्राईल के बारह पुत्रों में से कैदाद के वंश वाले हिजाज़ (मक्के और उस के आसपास का इलाक़ा) में आबाद हुए उन में अदनान सब से अधिक प्रसिद्ध थे। इस्लाम धर्म के आदि प्रवर्त्तक इन्हीं के वंशज थे। आप की वंश माला निम्नलिखित प्रकार से अदनान तक पहुँचती है।

अदनान के पुत्र माद के पुत्र नज़ार के पुत्र मुज़र के पुत्र इलयास के पुत्र मुदरका के पुत्र ख़ज़ीमा के पुत्र केनाना के पुत्र नज़र के पुत्र मालिक के पुत्र फ़हर के पुत्र गालिब के पुत्र लवी के पुत्र काब के पुत्र मुहा के पुत्र कलाब के पुत्र कुसी के पुत्र अब्दे मुनाफ़ के पुत्र हाशिम के पुत्र अब्दुल मुत्तलिब के पुत्र अब्दुल्लाह के पुत्र मुहम्मद साहब थे।

इन में से नजर जो केनाना के पुत्र थे उन का वंश कुरैश कहलाता था। हज़रत मुहम्मद साहब की माता हज़रत बीबी आमना वहब की पुत्री थीं। वहब के पिता अब्दे मुनाफ़ उनके पिता ज़हरत: उन के पिता कलाब उनके पिता का नाम मुहा था। इस प्रकार हज़रत मुहम्मद पिता और माता दोनों की ओर से कुरैश के आदरणीय गोत्र से सम्बंध रखते थे।

जन्म

सन् ५७० ई० में जिस वर्ष अबरहा हबशी ने काबा-गृह पर हाथियों की सेना लेकर आक्रमण किया है जिस से अरबों ने आमुलफ़ील (हाथी की सेना) के नाम से सन बनाया उसी वर्ष

शुक्रवार के दिन १७ रबीउलअव्वल को हिजाज़ की भूमि पर मक्के में हज़रत मुहम्मद पैदा हुए।

अनाथत्व (यतीमी)

इतिहास से यह पता चलता है कि हज़रत जब माता के गर्भ में थे उसी समय आप के पिता का देहान्त हो गया था जब आप दो महीने या सात महीने के थे या अधिक से अधिक दो वर्ष या दो वर्ष चार महीने के थे तभी आपके पिता का देहान्त हुआ। इतिहासकारों ने इस विषय में कोई ठीक निर्णय अभी तक नहीं किया। हज़रत के जीवन की दूसरी प्रमुख घटना यह है कि जब आप केवल छः वर्ष के थे तो वात्सल्यमयी माता भी चल बसीं। समस्त संसार को अपने महान आदर्श से शान्ति देने वाले को कदाचित ख़ुदा यही चाहता था कि उसे माता पिता दोनों के प्रेम छत्र से वाँचित रक्खा जाए।

पालन पोषण

असद के गोत्र में से हलीमा वह सौभाग्यवती महिला थीं जो रसूलिल्लाह को दूध पिलाने के लिये नियुक्त हुईं और इस समय में उन्हों ने हज़रत को अपने गांव में रक्खा उसके बाद छः वर्ष की आयु तक आप अपनी माता के पास रहे माता के मरने के बाद आप के दादा अब्दुलमुत्तलिब ने आप को अपने पास बुला लिया। वे अपने सब पुत्रों से अधिक आप से स्नेह करते थे। आपका लालन पालन इस प्रकार आरम्भ हुआ, परन्तु दो वर्ष बीतने पर अब्दुल मुत्तलिब का भी देहान्त हो गया। अब्दुल मुत्तलिब को अपने अन्तिम समय में भी इस बालक

की बड़ी चिन्ता थी क्यों कि वह जानते थे कि यह बालक बहुत ही महान् व्यक्ति होगा। यही कारण था कि जब अब्दुलमुत्तलिब अपने जीवन से निराश हो गए तो उन्हों ने मुहम्मद साहब को अपने पुत्र अबूतालिब के संरक्षण में दे दिया हालांकि उन के दूसरे भाई उन से आयु में बड़े मौजूद थे। अब्दुल मुत्तलिब की दूरदर्शिता ने यह भांप लिया कि मुहम्मद साहब के लिये जिस प्रकार अबूतालिब जान तोड़ सेवा करेंगे उस प्रकार कोई दूसरा नहीं कर सकता।

बस अबूतालिब ने अपने बाप से जो प्रतिज्ञा की थी उस को मरते दम तक निभाया और बहुत सी भयँकर परिस्थितियों में हज़रत मुहम्मद साहब की सहायता की। आठ वर्ष की आयु से लेकर निरतंर रसूल (मुहम्मद) के चचा ने उनकी देख रेख अत्यन्त मेहनत से उस समय तक की जब तक वह जीवित रहे। आप (मुहम्मद साहब) की चची (असद की पुत्री फ़ात्मा) आप से पुत्र समान स्नेह करती थीं। उन के मरने पर रसूल ने यह शब्द कहे "यह मेरी माता के बाद मेरे लिये माता समान थीं"।

शाम की पहली यात्रा

(शाम अरब के देश में एक प्रदेश या (रियासत) है। जब मुहम्मद साहब की आयु बारह (१२) वर्ष की थी तो आप के चचा अबूतालिब ने शाम की ओर व्यापार के हेतु यात्रा की आप भी चचा के साथ गए इस यात्रा में बोहैरा जो बहुत बड़ा तपस्वी था उसने उन लक्षणों के आधार पर जिन का वर्णन प्राचीन आसमानी पुस्तकों में था यह कहा कि यह बच्चा नबी (अल्लाह का दूत) होने वाला है और इसको यश और अनुपम

शक्ति प्राप्त होगी। बोहैरा से यह भेंट रास्ते में हुई थी और क्षण भर के लिये हुई थी। रसूल ने वहाँ कुछ दिन भी विश्राम न किया।

हिलफ़ुलफ़ज़ूल (महान् पुरुषों की शपथ)

जब आप की आयु बीस वर्ष की हुई तो कुरैश में हिलफुलफ़ज़ूल (महान पुरुषों की शपथ) की स्वीकृति हुई जो अच्छे सिद्धान्तों पर निर्भर थी। अब्दुलमुत्तलिब के मरने के बाद अरब के गोत्रों में स्वैराधिराज्य तथा अनियमितता आ गई यहाँ तक कि पड़ोसियों का जान व माल मक्के में भी सुरक्षित न था। इस लिये हाशिम के वंशजों के बुलावे पर जुहरा और तीम के वंशज भी जदआन के पुत्र अब्दुल्लाह के घर पर आये और सब ने यह प्रण किया कि सदा दुःखियों का साथ देंगे। और उस समय तक चैन से न बैठेंगे जब तक दुःखियों को पूरा इतमीनान न दिला देंगे। यह प्रण रसूलिल्लाह (मुहम्मद साहब) ने भी किया। यहाँ तक कि इस्लाम धर्म के उदय के बाद भी जब कि अरब के अशिक्षित काल के दूसरे प्रण वैधानिक दृष्टिकोण से असान्य कर दिये गये थे तो भी पैग़म्बर साहब इस प्रण का पालन करना आवश्यक समझते रहे वे बराबर इस प्रतिज्ञा के अन्तर्गत लोगों की सहायता करने के लिये तय्यार रहते थे।

व्यापार-यात्रा

रसूल की आयु पचीस साल की थी जब आप ख़दीजा, ख़ुवैलद की पुत्री का माल (व्यापार सामग्री) ले कर शाम की

ओर गए। इस व्यापार में ख़दीजा को हर वर्ष से दूना लाभ हुआ।

विवाह

इस व्यापार के हेतु की गई यात्रा के फलस्वरूप रसूल के चरित्र, ईमानदारी और अन्य ग्राह्य गुणों का प्रभाव ख़दीजा पर गहरा पड़ा था और रसूल (मुहम्मद साहब) भी हज़रत ख़दीजा के चरित्र और व्यवहार से प्रभावित थे। इस का फल यह हुआ कि जब रसूल से ख़दीजा के साथ विवाह करने का प्रस्ताव किया गया तो उन्हों ने केवल यही कहा "कि ख़दीजा बहुत धनाढ्य है परन्तु जब बीच में पड़ने वाले आदमी ने कहा कि वह ख़दीजा की रज़ामन्दी का ज़िम्मेवार है तो रसूल ने ख़दीजा से विवाह करने की अनुमति दे दी। ख़दीजा ने रसूल (मुहम्मद साहब) से विवाह कर स्वीकार कर लिया। विवाह की तिथि नियुक्त हो गई और ख़दीजा की ओर से उन के चचा अम्रबिन असद ने और रसूल की ओर से हज़रत अली के पिता अबूतालिब ने विवाह की सारी आवश्यक रीतियों को पूरा किया हज़रत ख़दीजा हज़रत रसूल से उम्र में बड़ी थीं फिर भी उन के समुज्ज्वल चरित्र के कारण रसूल उनका आदर करते थे और उन के जीवन भर रसूले इस्लाम ने किसी दूसरी स्त्री से विवाह करने की कल्पना भी न की।

चरित्र की महानता

रसूल के बाल्यकाल से युवा अवस्था तक के जीवन के अनुभवों ने अरबों पर यह प्रभाव डाला कि उन्हों ने रसूल की ईमानदारी और अमानतदारी को बिना किसी विरोध के मान लिया और आप को अरब वाले सादिक़ (सच्चा) और अमीन

(दूसरों की चीज़ों का रक्षक) कह कर पुकारने लगे और अपनी अमानतों को आप के पास रखना शुरू किया। इसके अलावा महत्त्व पूर्ण विषयों पर वे आप से परामर्श भी कर लिया करते थे। अतएव जब काबा गृह की मरम्मत के अवसर पर काले पत्थर (हजरे अस्वद) के जमाने का आदर प्राप्त करने का प्रयत्न अरब के विभिन्न गोत्रों में झगड़े का कारण बन गया था तो इस झगड़े का आप ही के द्वारा निपटारा हुआ और अरब में एक बहुत बड़ी खू ंरेज़ी होते होते बची।

बेसत

(जब अल्लाह की ओर से सत्यमार्ग दिखाने का आदेश दिया गया)

हजरत की आयु चालीस वर्ष की थी जब ईश्वर की ओर से २७ रजब को रसूल के कार्य करने की आज्ञा दी गई और क्रियात्मक रूप से अल्लाह के संदेश के पहुँचाने का अवसर मिला। आप ने रसूल की हैसियत से सब से प्रथम इस संदेश को अपनी पत्नी खदीजा तक पहुँचाया और वह इस पर सच्चे दिल से ईमान लाई और रसूल की सच्चाई की गवाही दी। फिर प्रतिदिन एक्का-दुक्का लोग ईमान लाते रहे परन्तु अभी तक यह कार्य पर्दे में हो रहा था अभी कोई अवसर ऐसा प्राप्त नहीं हुआ था कि खुले आम रसूल अपनी आवाज़ उठाते। जो लोग इस्लाम धर्म स्वीकार करते थे उन को आदेश था कि वह गुप्त रूप से धार्मिक नियमों का पालन करें।

दावते अशीरा

(वह दावत जिसमें खानदान वालों को बुला कर इस्लाम का संदेश दिया गया।)

तीन वर्ष तक गुप्त रूप से धर्म फैलाने के बाद अल्लाह का हुक्म आया कि रसूल अपने क़रीबी रिश्तेदारों को इकट्ठा करके इस्लाम धर्म की घोषणा करें अतएव रसूल ने अपने भाई हज़रत अली को आदेश दिया कि वह दावत का सामान करें और इस आदेश के अनुसार भोजन आदि का प्रबंध किया गया। इस में कुरैश के गण-मान्य व्यक्तियों को निमंत्रित किया गया जब सब एकत्रित हुये तो भोजन के बाद रसूल ने खड़े होकर कहा "मैं वह वस्तु लेकर आया हूं जो दोनों लोकों में सफलता प्रदान करेगी। मैं अल्लाह के पैदा किये हुए इन्सानों को अल्लाह की तौहीद (अकेलेपन अर्थात् अल्लाह निराकार एवं अकेला है उस का कोई अंग नहीं वह सर्वशक्तिमान है) और अच्छे कर्मों की ओर बुलाने आया हूँ, तुम में से कौन है जो इस अवसर पर मेरा साथ देगा ताकि वही मेरा मित्र, सहायक और ख़लीफ़ा (उत्तराधिकारी) हो"। यह भाषण सुनते ही पूरी सभा में सन्नाटा छा गया किसी ने कोई उत्तर न दिया बस एक छोटे से किन्तु होनहार बालक ने जिसका नाम अली था और जो रसूल के चचा अबूतालिब का पुत्र था, खड़े हो कर कहा "मैं इस शुभ-कार्य में आप का सहायक रहूंगा"। यों तो अली रचनात्मक रूप से पहले ही से रसूल के सहायक थे अब एक भरी सभा के समक्ष अपनी वफ़ादारी की घोषणा कर रहे थे। मुहम्मद साहब ने अली के कंधे पर हाथ रक्खा और कहा "यह मेरा सहायक तथा ख़लीफ़ा (उत्तराधिकारी) है"।

विपदाएँ

रसूल ने कुरैश के समक्ष खुले आम मूर्ति पूजा की बुराइयों का वर्णन किया और अल्लाह की पूजा का प्रचार आरम्भ किया

कु.रैश आप को दुःख देने का प्रयत्न करने में लग गए परन्तु अबूतालिब के व्यक्तित्व से जो आप को रक्षक था कु.रैश वाले मजबूर थे। अतएव कु.रैश के सम्भ्रान्त व्यक्ति मिलकर अबूतालिब के पास आये और रसूल की शिकायत बहुत कड़वे शब्दों में करने लगे और कहा कि आप अपने भतीजे को रोकिए अथवा आप बीच से हट जाइए हम उन से समझ लेंगे। अबूतालिब ने हज़रत (मुहम्मद साहब) से उस घटना का वर्णन किया तो हज़रत ने कहा कि "यह मेरे एक हाथ पर सूर्य और दूसरे पर चन्द्रमा रख दें फिर भी मैं सत्य का प्रचार नहीं छोड़ सकता"। अबूतालिब ने उन लोगों से साफ़ साफ़ यही कह दिया जिससे उन की शत्रुता की अग्नि और प्रज्ज्वलित हो गई और यह उन बेचारे मुसलमानों को बहुत सताने लगे जिन्हों ने रसूल को रसूल माना था और ईमान लाए थे।

पहली हिजरत (प्रथम प्रस्थान)

बेसत के पांचवें वर्ष मुसलमानों पर बहुत अत्याचार होने लगे तो रसूल ने अपने साथियों को हब्श देश की ओर चले जाने का आदेश दिया और काफ़ी संख्या में मुसलमान हब्श की ओर रवाना हो गए। इन शरणार्थियों के सरदार अबूतालिब के एक पुत्र जाफ़र थे जिन्हों ने बड़े अच्छे ढंग से हब्श के ईसाई बादशाह के दरबार में इस्लामी शिक्षा का विवरण किया जिससे बादशाह तथा राज्य के महान् व्यक्तियों के हृदय पर इस्लाम धर्म का सिक्का जम गया और मुसलमानों को वहां सन्तोष के साथ रहने का अवसर प्राप्त हुआ।

घेरा

हब्श में मुसलमानों की सफलता का हाल सुन कर कुरैश

के मुश्रेकीन (वे लोग अल्लाह को कई भागों में बटा मानते थे) अत्यधिक क्रुद्ध हो उठे और उन्हों ने आपस में मिल कर यह तै किया कि हाशिम के गोत्र वालों का पूरी तरह बाईकाट किया जाए। न केवल यह कि उनके साथ शादी विवाह को बुरा समझा जाए बल्कि उनके साथ लेन देन भी न किया जाये और जीवन की आवश्यकताएं भोजन तथा जल भी उन तक न पहुँचने दिया जाए अबुतालिब ने विवश होकर रसूल को एक ऐसे सुरक्षित घर में कर दिया जो पहाड़ की घाटी में दुर्ग के समान था। उसे अरबी में शेबे अबूतालिब कहते हैं। यह घटना उन की बेसत के सातवें वर्ष की है और तीन वर्ष तक लगातार यह घेरा रहा। इस काल में हज़रत मुहम्मद और अन्य हाशमी (हाशिम के गोत्र वाले) को असह्य अत्याचारों का सामाना करना पड़ा यहाँ तक कि कई कई जून तक उन्हें भूखे रहना पड़ता था। तीन साल के पश्चात यह बाईकाट समाप्त हुआ और यह लोग उस दुर्ग से बाहर निकल सके।

दो बड़ी दुःखमय घटनाएँ

बड़े शोक का स्थान है कि इस घेरे के समाप्त होने के दो ही महीने के बाद अर्थात् बेसत के दसवें वर्ष अबूतालिब का तथा उन के पैंतीस ही दिन बाद रसूल की पत्नी खदीजा का देहान्त हो गया। इन दोनों के निधन ने रसूल को बड़ा शोक पहुँचाया। यही कारण था कि आप उस वर्ष को आमुलहुज्न (रंज का साल) कहा करते थे।

ताएफ़ की यात्रा

अबूतालिब के बाद कुरैश का अत्याचार एवं दुर्व्यवहार

रसूल के प्रति बहुत बढ़ गया अपना देश रसूल के लिए संकटपूर्ण प्रतीत होने लगा। आप को इस्लाम धर्म के प्रचार के लिए किसी उचित स्थान की आवश्यकता भी थी। अतएव आप ने बेसत के दसवें वर्ष के अन्त में एक शरणार्थी के रूप में ही नहीं बल्कि एक सत्यपथप्रदर्शक के रूप में ताएफ़ देश की ओर यात्रा की उस समय आप के पास कोइ सामान नहीं था केवल जैद बिन हारसा को साथ लेकर आप अरब के इस हरे भरे स्थान पर दस दिन तक रुके और व्यक्तिगत रूप से इस्लाम का संदेश लोगों तक पहुँचाया। परन्तु यहाँ पर भी इस्लाम का प्रसार न हो सका। न केवल उन्हों ने आप का धर्म स्वीकार किया बल्कि उन्हों ने आप को वहां ठहरने भी न दिया और आप के पवित्र शरीर पर पत्थर मारे। आप ने फिर मक्के की ओर प्रस्थान किया परन्तु यह सब कठिनाइयाँ रसूल को सत्यमार्ग दिखाने की निरन्तर कोशिश से अलग न कर सकीं।

अन्सार की मुलाक़ात

(सहायकों का मिलाप)

महान मक्के में हर वर्ष मजिन्ना, और अक्काज के जो बाजार लगते थे और जो विभिन्न दिशाओं के रहने वाले गोत्र उन में एकत्रित होते थे उस अवसर पर अरब के कवि अपनी कविताएँ सुनाते थे। व्यापारी अपनी व्यवपारसामग्री लाकर बेचते थे और रसूल का कार्य यह था कि वह अपने "तौहीद" के संदेश को उपस्थित कर के लोगों को अपनी सहायता का निमन्त्रण देते थे। किन्तु सत्यता और धर्म के निमन्त्रण को स्वीकार करने की शक्ति रखने वालों ही पर वास्तविक सत्य स्वर का प्रभाव पड़ सकता है। उस समय जब कि अरब के

बहुधा गोत्र रसूल की बातों की हंसी उड़ाया करते थे, एक गोत्र सौभाग्यवश रसूल की बातों से प्रभावित हो गया। और उस गोत्र वालों ने धर्म की सत्यता में विश्वास के कारण आप की सहायता का वचन दिया। यह पहला सहायक क़बीला था जो इस्लाम धर्म को मानने वाला बना। और फिर उस ने अपने नगर में जा कर रसूल का संदेश सुनाया और बहुत से लोगों ने बिना आप को देखे हुये आप के रसूल होने का विश्वास किया। दूसरे वर्ष उन में से बारह आदमी रसूल से आ कर मिले और आप से इस्लामिक बातों की शिक्षा ली और तीसरे वर्ष सत्तर आदमियों ने उपस्थित हो कर यह सौभाग्य प्राप्त किया। यह लोग मदीने के रहने वाले थे। मदीने में इस्लाम काफ़ी फैल गया और लोग बड़ी संख्या में मुसलमान होने लगे जिन में से प्रायः केवल इस्लामी शिक्षा से प्रभावित हो कर इस गौरव को प्राप्त कर रहे थे और अभी उन की आँखों ने रसूल का पवित्र मुख नहीं देखा था।

मदीने की ओर हिजरत (प्रस्थान)

यसरब यानी मदीना में इस्लाम की सफलता का हाल सुन कर मक्के वालों का क्रोध बढ़ रहा था और अब वे मुसलमानों को असह्य दुःख देने लगे। अन्त में अल्लाह के रसूल ने उन को मदीने (यसरब) की ओर प्रस्थान करने की अनुमति दी। धीरे धीरे प्रायः मुसलमान मक्के से निकल गए। केवल मुहम्मद साहब, हज़रत अली और कुछ अन्य मुसलमान बाक़ी रह गए अब मुशरेकीन को विश्वास हो गया कि रसूल को यसरब में एक सुरक्षित स्थान मिल गया और शीघ्र ही यह स्वयं वहां पहुँच जाऐंगे तो हमारी अपेक्षा एक बड़ी शक्ति इन

को प्राप्त हो जायगी इस लिए दारुन्नदवा (एसम्बली हाउस) में एकत्रित होकर सबने निर्णय किया कि रात के समय आप के घर को घेर कर आप के जीवन-दीपक को बुझा दें। हज़रत रसूल को इस बात का पता चल गया और आप ने तै किया कि अपने बिस्तर पर हज़रत अली (अल्लाह उनपर सलामती भेजे) को लिटा कर चुपके से छुप कर मक्के को छोड़ मदीने की ओर चले जाएं अतएव अबूतालिब के पुत्र हज़रत अली अपने को खतरे में डालकर रसूल के बिछौने पर लेटे और हज़रत मुहम्मद शत्रुओं की दृष्टि से बच कर गुप्त रूप से मदीने की ओर चले गए। इसी बड़ी घटना का नाम हिजरत है और मुसलमानों का संवत इसी दिन से हिजरी कहलाया जिसे इस समय तेरह सौ चौहत्तर वर्ष पूरे हो चुके हैं।

मसजिद नबवी का बनना

रसूल ने मदीने पहुँच कर जो प्रथम कार्य किया वह एक मसजिद का बनवाना है। इस के बनने में सब मुसलमानों के समान रसूल भी पत्थर उठा उठा कर लाते थे। प्रारम्भ में एक मनुष्य के इतनी ऊंची दीवार बनवाई गई फिर जब नमाज़ पढ़ने वालों को गर्मी से कष्ट पहूँचने लगा तो खु.र्मा (खजूर) के वृक्ष की शाखाओं द्वारा एक छप्पर डाल दिया गया। परन्तु मित्रों के कहने पर भी छत नहीं बनवाई गई इस मसजिद के चारों ओर अपने रिश्तेदारों तथा आवश्यकता रखने वाले मित्रों के लिए छोटे छोटे घर बनवाए। इन घरों का दरवाज़ा पहले मसजिद ही में खुलता था परन्तु बाद में हज़रत अली को छोड़ कर सब के दरवाज़े बन्द करा दिये गये और बाहर से आने जाने का आदेश आ।

जिहाद (धर्म युद्ध)

जब कुरैश को पता चला कि रसूल कुशलतापूर्वक मदीने पहुँच गये और उन का धर्म दिन दूना रात चौगुना उन्नति कर रहा है तो उन की आंखों में अंधेरा छा गया और वह मदीने के यहूदियों के साथ मिल कर इस बात का प्रयत्न करने लगे कि वह मुहम्मद साहेब की शक्ति को कुचल दें। इस का फल यह हुआ कि हज़रत को मुशरेकीन तथा यहूदियों से बहुत से युद्ध करने पड़े जिन में से महत्त्वपूर्ण अवसरों पर रसूलिल्लाह स्वयं युद्धस्थलों में गये। ऐसे युद्ध जिन में स्वयं रसूल भी मुसलमानों के साथ गये हों "ग़ज़वा" कहते हैं और जिन अवसरों पर आप अपने मित्रों में से किसी को सरदार बना कर भेज दिया करते थे उन को "सरीया" कहते हैं। ग़ज़वात की कुल संख्या छब्बीस थी जिनमें बद्र, ओहद, खन्दक़, खैबर और हुनैन बहुत प्रसिद्ध हैं। और सरीयाओं की कुल संख्या छत्तीस थी जिन में सब से प्रसिद्ध मौता का युद्ध है। इसी लड़ाई में हज़रत जाफ़रे तैय्यार शहीद हुये।

हुदैबिया की संधि

बद्र व ओहद के युद्धों के बाद कुछ दिनों तक जब मक्के के मुशरेकीन की ओर से कोई युद्ध की कार्रवाई नहीं हुई तो हिजरत के छटे साल हज़रत मुहम्मद ने मक्के जाकर हज करने का विचार किया और मुसलमानों के गण के साथ मक्के की ओर रवाना हुये परन्तु जब कुरैशियों को रसूल के आने का हाल मालूम हुआ तो वह मक्के से बाहर रसूल का रास्ता रोकने को तैयार हो गए और उन्हों ने कहा कि "हम अपनी आंखों से

आपका मक्का नगर में आना नहीं देख सकते। मक्के वालों का यह ग़लत व्यवहार देख कर रसूल ने शांतिप्रेमी होने के नाते उन के साथ एक लिखित संधि की। इस संधि के लिखने वाले अबूतालिब के पुत्र हज़रत अली थे। इस की शर्तें निम्नलिखत हैं।

१- रसूल इस साल बिना हज क्रिया की पूर्ति के साथियों सहित वापस जायें।

२- दस वर्ष तक आपस में कोई युद्ध न होगा।

३- अगर मक्के वालों में से कोई मुसलमानों में जाकर मिल जाए तो मुसलमानों का कर्तव्य होगा कि वह उसे वापस कर दें।

४- अगर कोई मुसलमान भाग कर मुशरेकीन के पास आ जाए तो वह वापस नहीं किया जायगा।

५- अरब के सभी गोत्रों को अधिकार है कि चाहे वह रसूले इस्लाम के साथ मित्रता कर लें चाहे मक्के के मुशरेकीन के साथ हो जाएँ।

६- आने वाले वर्ष में मुसलमानों को मक्के तीर्थ का अधिकार होगा परन्तु वही तीन रोज़ से अधिक नहीं ठहर सकते।

७- मुसलमान उस अवसर पर अपनी तलवारों को म्यान में रख कर ही आ सकेंगे।

कुछ मुसलमान इह संधि की शर्तों पर क्रोध प्रकट कर रहे थे, परन्तु रसूल ने इस लिए संधि पर हस्ताक्षर कर के मक्के

से प्रस्थान स्वीकार किया ताकि आप पर लड़ाका होने का दोष न रक्खा जाय। दूसरे वर्ष संधि के अनुसार हज के लिए गये और तीन दिन ठहर कर मदीना वापस चले आये।

मक्के की विजय

कुछ ही दिनों के बाद मक्के वालों ने उस संधि को जो उन्हों ने रसूल के साथ की थी तोड़ दिया और खिज़ाया गोत्र को जो रसूल का मित्र था, बक्र के गोत्र ने जो मुशरेकीन का मित्र था तलवार के घाट उतार दिया। जब हज़रत को इस का पता लगा तो आप अपने मित्र गोत्र की सहायता के लिये रवाना हो गए और दस हज़ार मुसलमानों की सेना के साथ मक्के के बाहर पड़ाव किया। मुशरेकीन में सामना करने की शक्ति न रही। उन्हों ने हथियार डाल देना उचित समझा और सन् आठ हिजरी रमजान के महीने में आप ने एक विजयी के रूप से मक्के में प्रवेश किया। अब यहाँ पैग़म्बर साहब की दया क्षमाशीलता, दर्शनीय थी। उन्हों ने उन सब लोगों को क्षमा कर दिया जिन्हों ने आप को संकट में फंसाया था और आप पर अत्याचार किया था। विजय के अवसर पर जब लोग आप के आज्ञाकारी बन रहे थे तो आप ने सब से पूछा तुम्हें मुझ से क्या आशा है सब ने कहा "अच्छाई की आशा है आप दानी भाई हैं और दानी पिता के पुत्र हैं"। रसूल ने कहा "जाओ तुम सब स्वतंत्र हो"।

उस समय तो संसार के आश्चर्य की कोई सीमा न रही जब उसने देखा कि रसूल ने अबूसूफ़ियान को और उस की उस स्त्री को जिसने हज़रत हमज़ा का जिगर भक्षण किया था और

अक्रमा जो अबूजिहल का पुत्र था को केवल दिखाने के मुसलमान बनने पर ही बिना किसी शर्त के क्षमा कर दिया। मक्के को जीतने के पश्चात् वहां आप (रसूल) डेढ़ महीना ठहरे और राज्यप्रबंध के लिए ऐसा विधान बनाया जो आज भी सभ्यराष्ट्रों में प्रचलित हैं।

अन्तिम हज

सन् दस हिजरी रसूलिल्लाह ने अपने जीवन का अन्तिम हज किया। यह हज हजारों मुसलमानों के साथ बड़ी धूम और शान से रसूल ने किया। प्रस्थान के समय गदीरे खुम के स्थान पर हर ओर के मुसलमानों के बीच रसूल ने वह स्मृतीय एतिहासिक भाषण दिया जिस में आप ने अपनी मृत्यु का दुःखद समाचार सुनाया और बताया कि मैं शीघ्र इस संसार को त्याग देने वाला हूँ और उन सब से पूछा "मैं तुम्हारे विषय में तुम सब से अधिक अधिकार रखता हूं या नहीं"। सब ने कहा कि निस्सन्देह आप हम पर हम सब से अधिक अधिकार रखते हैं।" उस समय आप ने अबूतालिब के पुत्र हज़रत अली का हाथ पकड़ कर भीड़ के सामने ऊंचा किया और कहा कि जो अधिकार तुम्हारे ऊपर मुझे प्राप्त हैं वही अली को भी तुम्हारे ऊपर प्राप्त होंगे। इस प्रकार आपने अपने बाद अपने उत्तराधिकारी के नाम की घोषणा की। मुसलमानों ने इस घोषणा पर बड़ी प्रसन्नता और सन्तोष प्रकट किया। और साधारणतः उसी समय अली रसूल उत्तराधिकारी मान लिए गए।

शिक्षा, सिद्धान्त, चरित्र तथा आदतें

पैग़म्बरे इस्लाम की शिक्षा का मुख्य तत्त्व समस्त मानव

समाज की दृष्टि को साँसारिक वृत से हटा कर एक ईश्वरीय शक्ति की ओर आकर्षित करना था। और जिस के अनुसार सभी मनुष्य एक समान हैं पैदा करने वाले का अकेला पन और पैदा किय हुओं का आपस में परस्पर यही दो मुख्य स्तम्भ हैं जिन पर अल्लाह तथा मनुष्य के अधिकारों का महल खड़ा किया गया और मानवता के इतिहास में पहली बार नागरिकता तथा मानवता के अधिकार पूर्णरूप से मनुष्यों को प्राप्त हुए। जाति, रंग, धन, निधर्नता आदि के कारण कोई अपने अधिकारों को नहीं खो सकता था। इस सिद्धान्त ने पहले के ऊँच नीच के अन्तर को मिटा कर एक नया बड़ाई का सिद्धान्त बनाया था। यह मान्यवर सिद्धान्त केवल यह था कि वह मनुष्य उच्च है जिस के कर्म गौरवशाली एवं अच्छे हों। जो मानव समाज के अधिक काम आसके वही यशवान है।

हज़रत मुहम्मद साहब ने चरित्रनिर्माण पर बड़ा जोर दिया। हज़रत कहते थे कि 'मैं केवल अच्छी बातों तथा चरित्र की शिक्षा के लिए भेजा गया हूं" आप की अपनी आदतें तथा चरित्र भी इसी ध्येय को सिद्ध करते हैं। आप इतनी विशाल इस्लामी जमाअत (गण) के सरदार होते हुए भी मदीने के भिक्षकों के साथ उठते बैठते तथा आहार-विहार रखते थे। रात रात भर अल्लाह की उपासना होती थी और आप इतनी नमाज़ पढ़ते थे कि आप के पैरों में सूजन आ जाती थी इस के अतिरिक्त दिन भर अरब के विभिन गोत्रों एवं दूसरे स्थानों से आने वालों से मिलते थे। बड़ी बड़ी समस्याएं हल की जाती थीं और बड़े बड़े झगड़े चुकाए जाते थे। एक अंग्रेज इतिहासकार स्वर्गीय बास्वर्थ ने लिखा है कि "इतिहास में मुहम्मद साहब जैसा कोई

दूसरा व्यक्ति एक ही समय में तीन काम करता हुआ नहीं दिखाई पड़ता, एक यह कि वह एक नये धर्म के प्रवर्तक थे दूसरे एक नये नये शासन प्रबंध का प्रचार करने वाले थे साथ ही एक राष्ट्र के भी विधाता थे। इस पर भी आप ने कभी अपने को सम्राट या राजा कहलाना अच्छा और उचित न समझा और सदैव इस से इन्कार किया"।

एक बार आप की सेवा में एक आदमी आया और वह आप के व्यक्तित्व से प्रभावित हो कर कांपने लगा आप ने कहा "अपने आपे में आओ. मैं कोई बादशाह नहीं हूँ, मैं एक क़ुरैश गोत्र की स्त्री का पुत्र हूं जो बहुत साधारण भोजन करती थी"। इसी के अन्तर्गत आप की आदतें सादी थीं। मजदूरों के समान मकान बनते समय खुद काम करते थे, अपना सौदा बाज़ार से स्वयं लाते बल्कि पड़ोसियों का सौदा भी ला दिया करते थे दया और कठिनाइयों का मुकाबिला करने की शक्ति रखना आप के गुण थे। साहस, धैर्य और सन्तोष के साथ रचनात्मक कार्य करने में आप का प्रसन्नता प्राप्त होती थी। आप का कर्तव्य आप की शिक्षा दोनों एक दूसरे से मिलते थे। छोटे छोटे वाक्यों में बड़े बड़े अर्थों का वर्णन कर जाया करते थे। आप ने वह सिद्धान्त विश्व में फैला दिए जो मानव जीवन के हर क्षेत्र में काम आते हैं।

क़ुरान मजीद

क़ुरान यथार्थ और सत्यता का आगार है और मानव जीवन का सम्पूर्ण विधान है जो आप (मुहम्मद साहब) द्वारा संसार को ज्ञान देने के लिये हमारे समक्ष आया। करोड़ों

मनुष्यों ने जब से अब तक इस से लाभ उठाया और हज़ारों ऐसे लोग हैं जो धर्मानुसार इस पर विश्वास नहीं रखते परन्तु इस के गौरव और यश को मानते हैं।

मृत्यु

सोमवार के दिन दूसरी रबीउलअव्वल या एक कथन के अनुसार अट्ठाईस सफ़र सन् ग्यारह हिजरी को वह अभागी तिथि थी जब कुछ दिन बीमार रहने के बाद विश्व सुधारक पैगम्बरे इस्लाम हजरत मुहम्मद (स-ह-उ) ने संसार को त्याग दिया। आप की इच्छानुसार आप के भाई तथा उत्तराधिकारी और ख़लीफ़ा अबूतालिब के पुत्र हज़रत अली ने आप को दफ़्न किया। आपको इसी हुजरे (कोठरी) में दफ़्न किया गया जहां आप की मृत्यु हुई थी। इस प्रकार आप की अन्तिम क्रिया की पूर्ती हुई।

पवित्र मदीना में आप की क़ब्र का कुब्बा जो हरे रङ्ग का है आज भी संसार के मुसलमानों का तीर्थस्थान है जहाँ वह मक्के में हज करने के पहले या बाद में जाते हैं और रसूल के रौजे तथा मसजिद का दर्शन करते हैं।

———

मुद्रकः— डायमन्ड प्रेस, ४०९ शाहगंज, इलाहाबाद।

इमामिया मिशन लखनऊ

यह मिशन सन् १९३२ ई० में स्थापित हुआ था। यह मिशन वास्तविक इस्लाम के साहित्य का प्रकाशन करता है तथा इस्लाम के अतिरिक्त अन्य धर्मावलम्बियों में बिना मूल्य लिये अपनी पुस्तकों को वितरित करता है। इस मिशन की सहायता सदस्यता पुस्तकों के क्रय एवं अनुदान के द्वारा की जा सकती है।

सदस्यता के शुल्कों की सूची निम्नलिखित है।

१-	विशेष अनुदान देने वालों के लिये	५००)	एक बार में
२-	संरक्षक	१००)	,, ,,
३-	जीवन सदस्य	५०)	,, ,,
४-	विशेष सदस्य	५)	वार्षिक
५-	साधारण सदस्य	१)	,, ,,

टिप्पणीः- १- विशेष अनुदान देने वाले एवं संरक्षक मिशन के नये तथा पुराने प्रकाशन बिना मूल्य लिये प्राप्त कर सकेंगे।

२- जीवन सदस्य अपनी सदस्यता के पश्चात के सभी प्रकाशन बिना मूल्य प्राप्त कर सकेंगे तथा उसके पूर्व के प्रकाशनों को आधे मूल्य पर प्राप्त कर सकते हैं।

३- विशेष सदस्य अपने सदस्य होने के उपरान्त सभी प्रकाशन बिना मूल्य प्राप्त कर सकेंगे।

४- साधारण सदस्य अपनी सदस्यता के पश्चात के प्रकाशनों को आधे मूल्य पर प्राप्त कर सकेंगे।

अवैतनिक सचिव
इमामिया मिशन
नख्खास-लखनऊ (भारत)

इस्लाम की शिक्षा के जीते जागते उदाहरण हज़रत मुहम्मद साहब तथा उन की आदर्शमय जीवन यापन करने वाली सन्तानों की जीवनियां।

प्रत्येक पुस्तक का मूल्य ।) तथा डाक व्यय -)

मिलने का पता:—

आनरेरी सेक्रेटरी

इमामिया मिशन,

लखनऊ

(भारत वर्ष)